Unit - IV

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गंगापुर
वाराणसी

आपात उपबन्ध

भारत के संविधान के अनुच्छेद 352 से 360 में आपात उपबन्ध को बताया गया है। इन विशेष आपातकालीन प्रावधान को संकट की स्थितियों के दौरान भारत के राष्ट्रपति द्वारा घोषित किया जा सकता है। संविधान द्वारा प्रदत्त ये प्रावधान देश की संप्रभुता, एकता और लोकतांत्रिक व राजनीतिक स्थितियों की संकट में रक्षा करते हैं।

आपातकाल का अर्थ है - अप्रत्याशित परिस्थितियों का एक संयोजन जो विनाशकारी स्थिति पैदा करके जीवन, स्वास्थ्य, अर्थव्यवस्था, शांति के लिए एक बड़ा खतरा बन जाता है। भारत में आपातकाल स्थिति के दौरान, देश की संघीय व्यवस्था एकात्मक में परिवर्तित हो जाती है और पूरी शक्ति केन्द्र सरकार के हाथों में चली जाती है।

संविधान निम्नलिखित तीन प्रकार के आपात का ~~उपबन्ध~~ उपबन्ध करता है -

i) युद्ध या बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह से उत्पन्न आपात;
ii) राज्यों में सांविधानिक तन्त्र के विफल होने से उत्पन्न आपात;
iii) वित्तीय आपात।

(i) युद्ध या बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह से उत्पन्न आपात -

अनु० 352 यह उपबन्धित करता है कि - यदि राष्ट्रपति को इस बात का समाधान हो जाय कि गम्भीर आपात विद्यमान है जिससे युद्ध या बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह से भारत या उसके किसी भाग की सुरक्षा संकट में है या ऐसा संकट सन्निकट है तो वह उद्घोषणा द्वारा इस आशय की घोषणा कर सकेगा।

ऐसी घोषणा को उत्तरवर्ती उद्घोषणा द्वारा वापस ले सकता है या परिवर्तित कर सकता है।

~~राष्ट्रपति आपात की उद्घोषणा~~ राष्ट्रपति आपात की उद्घोषणा तभी जारी करेगा जब उसे मंत्रिमंडल का विनिश्चय लिखित रूप में संसूचित किया जायेगा।

ऐसी प्रत्येक उद्घोषणा संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जायेगी और 1 मास की समाप्ति पर, यदि उस अवधि की समाप्ति से पहले संसद के दोनों सदनों के संकल्पों द्वारा अनुमोदित नहीं कर दिया जाता तो प्रवर्तन में नहीं रहेगी। यदि ऐसी कोई उद्घोषणा उस समय जारी की जाती है जब लोकसभा का विघटन हो गया है या उसका विघटन खण्ड(2) के अन्तर्गत बिना कोई संकल्प पारित किये 1 मास की अवधि के भीतर हो जाता है और यदि उद्घोषणा का अनुमोदन करने वाला संकल्प राज्य-सभा ने पारित कर दिया तो वह उद्घोषणा पुनर्गठित लोकसभा की प्रथम बैठक की तारीख से 30 दिन की समाप्ति पर प्रवर्तन में न रहेगी, जब तक कि उपर्युक्त 30 दिन की अवधि की समाप्ति के पूर्व उद्घोषणा का अनुमोदन करने वाला संकल्प न पारित कर दिया गया हो।

उद्घोषणा का अनुमोदन करने वाला संकल्प सदन की कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा उस सदन के उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों में से कम से कम 2/3 बहुमत द्वारा ही पारित किया जा सकेगा।

संसद द्वारा अनुमोदित हो जाने पर आपात उद्घोषणा दूसरे संकल्प के पारित होने की तिथि से 6 मास तक की अवधि तक प्रवर्तन में रहेगी, यदि इसके पहले प्रतिसंहृत न कर दी गई हो। 6 मास की अवधि से अधिक जारी रखने के लिए प्रत्येक 6 मास पर संसद का अनुमोदन आवश्यक है।

आपात उद्घोषणा का प्रभाव –

(1) संघ द्वारा राज्यों को निर्देश –

आपात उद्घोषणा का सर्वप्रथम प्रभाव यह है कि संघ की कार्यपालिका शक्ति राज्यों को इस बात का निदेश देने तक विस्तृत हो जाती है कि वे अपनी कार्यपालिका शक्ति का किस रीति से प्रयोग करें। अनु० 353 (a)

(2) संघ की राज्य सूची के विषयों पर विधि बनाने की शक्ति –

आपात की उद्घोषणा के प्रवर्तन के समय संसद को राज्य सूची के किसी भी विषय पर विधि बनाने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। (अनु० 250)

डॉ० बंधु रामनारायण
[illegible] महाविद्यालय
डीठीं कोट, गंगापुर
वाराणसी

(3) वित्तीय सम्बन्धों में परिवर्तन -

आपात के उद्घोषणा प्रवर्तन की अवधि में राष्ट्रपति आदेश द्वारा जैसा कि वह उचित समझे, अनुच्छेद 268 से 279 तक में उपबन्धित केन्द्र और राज्यों के वित्तीय सम्बन्धों में परिवर्तन कर सकता है।

(4) लोकसभा की अवधि में वृद्धि -

जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है तब संसद विधि द्वारा लोकसभा की अवधि को एक वर्ष के लिए बढ़ा सकती है। यह अवधि एक बार में एक वर्ष से अधिक नहीं बढ़ायी जा सकती है और आपात उद्घोषणा के समाप्त हो जाने के पश्चात् 6 मास बाद स्वयं ही समाप्त हो जायेगी। (अनु 83 (2))

(5) अनु० 19 में प्रदत्त मूल अधिकारों का निलम्बन -

अनु० 358 के अनुसार जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, तब अनु० 19 की किसी बात से राज्य को कोई ऐसी विधि बनाने की अथवा कार्यपालिका को कोई ऐसी कार्यवाही करने की शक्ति अनु० 13 के उपबन्धों के अधीन नहीं होगी। अनु० 13 राज्य की विधायिका शक्ति पर अंकुश लगाता है जिसके अनुसार राज्य कोई भी ऐसा कानून नहीं निर्मित कर सकता जो मूलाधिकारों को कम करता या छीनता हो। किन्तु आपात उद्घोषणा के प्रवर्तन-काल में राज्य के ऊपर से यह प्रतिबन्ध समाप्त हो जाता है और राज्य द्वारा बनाये गये कानूनों को इस आधार पर न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती है कि वे मूलाधिकारों का उल्लंघन करते हैं।

एम० ए० पाठक बनाम भारत संघ

(6) अनु० 359 के अन्तर्गत मूल अधिकारों के प्रवर्तन का निलम्बन -

जहाँ आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है वहां राष्ट्रपति, आदेश द्वारा यह घोषणा कर सकेगा ~~&~~ कि अनु० 20 और अनु० 21 को छोड़कर भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों को निलंबित ~~कर सकेगा~~ किया जाता है।

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
बौली कोट, गंगापुर
वाराणसी

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गगापुर
वाराणसी

- साधन सिंह बनाम पंजाब राज्य 1964
- प्रभाकर पांडुरंग बनाम महाराष्ट्र राज्य 1966
- ए० डी० एम० जबलपुर बनाम एस० शुक्ल 1976

- राज्य की संरक्षा करने का संघ का कर्तव्य (अनु० 355)

अनु० 355 यह उपबन्धित करता है कि बाह्य आक्रमण और आन्तरिक अशान्ति से प्रत्येक राज्य की संरक्षा करना तथा प्रत्येक राज्य की सरकार इस संविधान के उपबंधों के अनुसार चलाई जाय, यह सुनिश्चित करना संघ का कर्तव्य होगा।

(2) राज्य में सांविधानिक तन्त्र के विफल हो जाने की दशा में उपबंध —

अनु० 356 यह उपबन्धित करता है कि यदि किसी राज्य के राज्यपाल से प्रतिवेदन मिलने पर या अन्यथा अन्यथा राष्ट्रपति को समाधान हो जाये कि ऐसी स्थिति पैदा हो गयी है जिसमें कि उस राज्य का शासन संविधान के उपबन्धों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता तो राष्ट्रपति उद्घोषणा द्वारा —

(i) उस राज्य की सरकार के सब या कोई कृत्य तथा राज्यपाल या राज्य के किसी निकाय या प्राधिकारी में निहित या उसके द्वारा प्रयोक्तव्य सब या कोई शक्ति अपने हाथ में ले सकेगा।

(ii) घोषित कर सकेगा कि राज्य के विधानमण्डल की शक्तियां संसद के प्राधिकार के द्वारा या अधीन प्रयोक्तव्य होंगी

(iii) वह ऐसे प्रासंगिक और आनुषंगिक उपबंध बना सकेगा जो राष्ट्रपति की उद्घोषणा के उद्देश्य को प्रभावी करने के लिए आवश्यक या वांछनीय दिखाई दे।

ऐसी किसी उद्घोषणा को राष्ट्रपति पश्चातवर्ती उद्घोषणा द्वारा वापस ले सकता है या उसमें परिवर्तन कर सकता है।

(3) <u>वित्तीय आपात</u> —

अनु॰ 360 यह उपबन्ध करता है कि यदि राष्ट्रपति को 'समाधान' हो जाय कि ऐसी स्थिति पैदा हो जाय कि ऐसी स्थिति पैदा हो गयी है जिसमें भारत या उसके किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में है तो वह उद्घोषणा द्वारा इस बात की घोषणा कर सकेगा। अनु॰ 360 के अधीन जारी की गई उद्घोषणा किसी उत्तरवर्ती उद्घोषणा द्वारा प्रतिसंहृत या परिवर्तित की जा सकेगी। अनुच्छेद 360 में जारी की गयी उद्घोषणा की कालावधि 2 महीने की होगी। यदि यह उद्घोषणा दो महीने की समाप्ति के पहले संसद द्वारा पारित संकल्प द्वारा अनुमोदित नहीं कर दी जाती है तो दो महीने की समाप्ति पर प्रवर्तन में न रहेगी।

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गंगापुर
वाराणसी

संविधान संशोधन

अनु० 368(1) संसद को संविधान में संशोधन करने की शक्ति प्रदान करता है। अनु० 368 कहता है कि इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, संसद अपनी संविधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए इस संविधान के किसी उपबंध का परिवर्द्धन, परिवर्तन या निरसन के रूप में इस अनुच्छेद में उल्लिखित प्रक्रिया के अनुसार संशोधन कर सकेगी। अनु 368(2) कहता है कि संविधान के सभी संशोधन विधेयक संसद के प्रत्येक सदन की कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा उस सदन के उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के कम से कम दो तिहाई बहुमत द्वारा पारित किया जायेगा। किन्तु यदि संशोधन (क) अनु० 54-55, 73, 162 या 241 में (ख) या अनु० 73, 162 में (ग) अनु० 124-147, 214, 231, 241 (घ) अनु० 245-255 (ङ) अनुसूची 7 में (ड.) अनु० 368 में है तो ऐसे संशोधन विधेयक को राष्ट्रपति के समक्ष अनुमति के लिए प्रस्तुत किए जाने के पहले उसे कम से कम आधे राज्यों के विधानमण्डलों द्वारा अनुसमर्थित भी किया जाना आवश्यक होगा।

- अनु०13 की कोई बात अनु० 368 के अधीन किए गए संशोधन को लागू नहीं होगी।
- संशोधन की दृष्टि से संविधान के विभिन्न उपबन्धों को तीन भागों में विभाजित किया गया है।

1) साधारण बहुमत — इसके अन्तर्गत अनु० 4, 169, और 239-A आते हैं। इसमें संशोधन के लिए संसद का साधारण बहुमत पर्याप्त है।

2) विशेष बहुमत — इन उपबन्धों के संशोधन के लिए विशेष बहुमत पर्याप्त है राज्यों के उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के 2/3 बहुमत से होता है।

बीकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गंगापुर
वाराणसी

3) विशेष बहुमत तथा राज्यों द्वारा अनुसमर्थन — इसके अन्तर्गत वे उपबन्ध आते हैं जो संघात्मक ढांचे से ~~सम्बन्धित~~ सम्बन्धित हैं। इन उपबन्धों के संशोधन के लिए कठिन प्रक्रिया अपनायी गयी है। इसमें संशोधन के लिए संसद के प्रत्येक सदन के 2/3 सदस्यों का बहुमत तथा कम से कम 50 प्रतिशत राज्यों के विधानमण्डलों का अनुसमर्थन भी आवश्यक है।

निम्नलिखित उपबन्धों के संशोधन के लिये विशेष बहुमत और राज्यों का अनुसमर्थन आवश्यक है —

1. राष्ट्रपति का निर्वाचन (अनु० 54-55)
2. संघ तथा राज्यों की कार्यपालिका - शक्ति का विस्तार (अनु० 73, 162)
3. संघ तथा राज्य न्यायपालिका (अनु० 124-147, 214-231, 241)
4. संघ और राज्यों के बीच विधायी शक्ति का वितरण (अनु० 245-255)
5. संसद में राज्यों के प्रतिनिधित्व में (अनुसूची 4)
6. सातवीं अनुसूची की किसी सूची में
7. अनु० 368 के उपबन्धों में

संशोधन की प्रक्रिया —

अनु 368 का खण्ड यह कहता है कि संविधान के संशोधन के लिए विधेयक किसी भी सदन में आरम्भ किया जा सकता है। जब यह विधेयक प्रत्येक सदन के कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा उसमें उपस्थित और मतदान करने वाले सदस्यों के कम से कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा पारित कर दिया जाता है तब राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किया जायेगा जो विधेयक पर अनुमति देने के लिए बाध्य होगा। विधेयक पर राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हो जाने पर तब संविधान उस विधेयक के निर्बन्धनों के अनुसार संशोधित हो जायेगा।

बाबू बन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
पीली कोठ, गंगापुर
वाराणसी

बाबू बन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गंगापुर
वाराणसी

मूल अधिकारों में संशोधन

शंकरी प्रसाद बनाम भारत संघ 1951 -

मूल अधिकारों में संशोधन से सम्बन्धित प्रश्न सर्वप्रथम इसी वाद में उच्चतम न्यायालय के समक्ष आया था। इसमें संविधान के प्रथम संशोधन अधिनियम 1951 की विधिमान्यता को चुनौती दी गयी थी। चुनौती का आधार यह था कि संशोधन संविधान के भाग 3 में दिये गये मूल अधिकारों का अतिक्रमण करता है जो अनु० 13(2) द्वारा वर्जित है; अतः अवैध है। पिटिशनरों ने यह तर्क दिया कि अनु० 368 के अन्तर्गत पारित 'सांविधानिक संशोधन' भी अनु० 13 में प्रयुक्त 'विधि' शब्द के अर्थान्तर्गत विधि है और भाग 3 में दिये गये अधिकारों के विरुद्ध होने के कारण वह असंवैधानिक है।

उच्चतम न्यायालय ने पिटिशनरों के तर्क को अस्वीकार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि संविधान के संशोधन की शक्ति, जिनमें मूल अधिकार भी शामिल हैं, अनु० 368 में निहित है। अनु० 13 में प्रयुक्त 'विधि' शब्द के अन्तर्गत केवल वे विधियां आती हैं जो सामान्य विधायी शक्ति के प्रयोग द्वारा बनायी जाती है, न कि सांविधानिक संशोधन जो संविधायी शक्ति के प्रयोग द्वारा पारित किये जाते हैं। अतएव अनु० 368 के अधीन पारित सांविधानिक संशोधन संवैधानिक होंगे।

सज्जन सिंह बनाम राजस्थान राज्य 1965 -

इस मामले में यह प्रश्न उच्चतम न्यायालय के समक्ष पुनः विचारार्थ आया। इसमें संविधान के 17वें संशोधन अधिनियम की वैधता को चुनौती दी गयी थी। इस मामले में उच्चतम न्यायालय ने शंकरी प्रसाद के मामले में दिये हुए अपने निर्णय का अनुमोदन किया। न्यायालय ने यह कहा कि यदि संविधान-निर्मातागण मूल अधिकारों को संशोधन से परे रखना चाहते होते तो वे संविधान में इसके बारे में स्पष्ट उपबन्ध करते।

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गगापुर
वाराणसी

गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य 1967

इस मामले में उच्चतम न्यायालय ने 6:5 के बहुमत से शंकरी प्रसाद और सज्जन सिंह के मामले में दिये गये अपने निर्णय को उलट दिया और यह अभिनिर्धारित किया कि संसद को भाग 3 में संशोधन करने की कोई शक्ति नहीं प्राप्त है। मुख्य न्यायाधीश श्री सुब्बाराव ने न्यायालय का निर्णय सुनाते हुए ~~अपना~~ कहा कि –

(1) संविधान के संशोधन की शक्ति संविधान के अनुच्छेद 245, 246, 248 में निहित है न कि अनु० 368 में। अनुच्छेद 368 में केवल संशोधन की प्रक्रिया का उपबन्ध किया गया है, संविधान संशोधन की शक्ति का नहीं। संशोधन एक विधायी प्रक्रिया है।

(2) संशोधित अनु० 13 में प्रयुक्त 'विधि' शब्द के अर्थान्तर्गत 'विधि' है यदि वह मूल अधिकारों को छीनता या न्यून करता है तो वह शून्य है। 'विधि' शब्द के अन्तर्गत सभी प्रकार की विधियां सम्मिलित हैं चाहे वह साधारण विधि हो या संविधान संशोधन विधि।

संविधान का 24 वां संशोधन, 1971 – उच्चतम न्यायालय द्वारा गोलकनाथ के मामले में दिये निर्णय से उत्पन्न कठिनाई को दूर करने के लिए संसद ने संविधान का 24 वां संशोधन अधिनियम पारित किया। इस संशोधन से अनु० 13 में खण्ड 4 जोड़ा गया है जो यह उपबन्धित करता है कि अनु० 13 की कोई बात अनुच्छेद 368 के अधीन किए गए इस संविधान के किसी संशोधन को लागू नहीं होगी।

24 वां संविधान संशोधन न केवल यह उद्घोषित करता है कि संविधान के संशोधन की शक्ति अनु० 368 में निहित है वरन् अनु० 368 में परिवर्तन, परिवर्धन या निरसन के रूप में संविधान के किसी उपबन्ध में संशोधन करने की शक्ति होगी।

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गगापुर
वाराणसी

केशवानन्द भारती बनाम केरल राज्य 1973 - के ऐतिहासिक मामले में संविधान के 24वें संशोधन अधिनियम की विधिमान्यता को चुनौती दी गयी। इस मामले में मुख्य विचारणीय प्रश्न यह था कि - संविधान के अनु० 368 में संसद को जो संशोधन की शक्ति प्राप्त है, उसकी सीमा क्या है?

न्यायालय ने 7:6 से यह निर्णय दिया कि यद्यपि अनुच्छेद 368 के अन्तर्गत संसद की संविधान में संशोधन करने की शक्ति पर्याप्त व्यापक है, किन्तु वह असीमित नहीं है, और वह कोई ऐसा संशोधन नहीं कर सकती है जिससे संविधान के मूल तत्व या उसका आधारभूत ढांचा नष्ट हो जाये। संसद की इस शक्ति पर विवक्षित परिसीमाएं हैं जो स्वयं संविधान में निहित है। संसद को इसी परिधि के भीतर अपनी शक्ति का प्रयोग करना है।

42 वाँ संशोधन 1976 ~~में~~ द्वारा अनु० 368 में दो नये खण्ड (4) और (5) जोड़े गये थे। खण्ड (4) यह स्पष्ट कर देता है कि अनु० 368 के अधीन किसी भी सांविधानिक संशोधन की विधिमान्यता को किसी भी न्यायालय में किसी भी आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती थी। खण्ड (5) सन्देह के निवारण के लिए यह घोषित कर सकता था कि इस अनुच्छेद के अन्तर्गत संविधान के उपबन्धों का संशोधन जोड़कर, परिवर्तन या निरसन करने के लिए संसद की सांविधायी शक्ति पर कोई भी परिसीमा न होगी

संविधान के 42वें संशोधन को मिनर्वा मिल्स बनाम भारत संघ 1980 नामक वाद में चुनौती दी गयी। इस वाद में उच्चतम न्यायालय की पूर्णपीठ ने यह मत व्यक्त किया है कि 42वें संशोधन संशोधन द्वारा अनु० 368 में खण्ड (4) तथा खण्ड (5) असंवैधानिक है क्योंकि उनके द्वारा अनु० 368 में प्रदत्त संसद की संशोधन शक्ति को असीमित कर दिया गया है। न्यायालय ने यह स्पष्ट कर दिया है कि भारत में संविधान सर्वोच्च है न कि संसद।

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोतीकोट, गगापुर
वाराणसी

आधारभूत ढाँचे का सिद्धान्त –

संविधान की आधारभूत संरचना का तात्पर्य संविधान में निहित उन प्रावधानों से है, जो संविधान और भारतीय राजनीतिक और लोकतांत्रिक आदर्शों को प्रस्तुत करता है। इन प्रावधानों को संविधान में संशोधन के द्वारा भी नहीं हटाया जा सकता है।

आधारभूत ढाँचे का सिद्धान्त संविधान संशोधन की शक्ति पर निर्बन्धन लगाता है। केशवानन्द भारती के मामले में बहुमत ने यह निर्णय दिया है कि संविधान संशोधन की शक्ति के प्रयोग द्वारा संविधान के "आधारभूत ढाँचे" को नष्ट नहीं किया जा सकता है। प्रश्न यह है कि आधारभूत ढाँचे के आवश्यक तत्व क्या है? कुछ आधारभूत तत्वों को दृष्टान्त के रूप में बताया गया है और यह भी स्पष्ट कर दिया है कि प्रत्येक मामले के तथ्यों पर इसका निर्धारण किया जायेगा कि संविधान का आधारभूत ढाँचा क्या है। मुख्य न्यायमूर्ति श्री सीकरी के अनुसार, निम्नलिखित संविधान के आधारभूत ढाँचे का उदाहरण है –

(1) संविधान की सर्वोपरिता
(2) सरकार का गणतन्त्रात्मक और प्रजातन्त्रात्मक रूप
(3) संविधान का धर्म-निरपेक्ष स्वरूप
(4) विधानमण्डल, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों का पृथक्करण
(5) संविधान की परिसंघात्मक प्रकृति।

न्यायमूर्ति श्री शेलट और ग्रोवर के अनुसार निम्नलिखित आधारभूत ढाँचे के उदाहरण है – (1) संविधान की सर्वोपरिता (2) सरकार का गणतन्त्रात्मक और लोकतन्त्रात्मक स्वरूप और देश की सम्प्रभुता (3) संविधान का धर्मनिरपेक्ष और संघात्मक स्वरूप (4) विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका में शक्तियों का विभाजन

(5) व्यक्ति की गरिमा जो भाग 3 में दी गई हैं, विभिन्न स्वाधीनता और मूल अधिकारों द्वारा सुनिश्चित होता है और भाग (4) में निहित कल्याणकारी राज्य की स्थापना का निदेश, (6) देश की एकता और अखण्डता।

न्यायमूर्ति हेगड़े और मुकर्जी ने निम्न को संविधान का आधारभूत ढाँचा बताया है - (1) भारत की सम्प्रभुता (2) देश की लोकतन्त्रात्मक प्रणाली (3) देश की एकता (4) वैयक्तिक स्वाधीनताएं (5) कल्याणकारी राज्य की स्थापना को आधारभूत ढाँचा बताया है।

इन आधारभूत सिद्धान्तों का न्यायमूर्ति श्री खन्ना से समर्थन किया है। अपना निर्णय कुछ अलग देते हुए उन्होंने ने कहा कि अनु० 368 के अन्तर्गत संशोधन की शक्ति में संविधान के पूरा-पूरा निराकरण करने की और उनके स्थान पर एक बिल्कुल नया संविधान रख देने की शक्ति शामिल नहीं है। संविधान के संशोधन का अर्थ संविधान का निरकरण नहीं वरन उसमें आवश्यक परिवर्तन मात्र करना है।

- केशवानन्द भारती के मामले में प्रतिपादि "आधारभूत ढाँचा" के सिद्धान्त को अनेक विनिश्चयों में लागू किया गया है।
  - इन्दिरा नेहरू गाँधी बनाम राजनारायण 1975
  - मिनर्वा मिल बनाम भारत संघ 1980
  - वामन राव बनाम भारत संघ 1981
  - एस.पी० सम्पत कुमार बनाम भारत संघ 1987
- अभी तक उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित "आधारभूत ढाँचे" को मान्यता दी है —

1) विधि शासन
2) समता का अधिकार एवं शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त
3) संविधान की सर्वोच्चता।

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गंगापुर
वाराणसी

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कटरा, सगहरा
वाराणसी

4) परिसंघवाद

5) पंथ निरपेक्षता

6) देश का प्रभुत्वसम्पन्न, लोकतान्त्रिक गणतान्त्रिक ढाँचा

7) संसदीय प्रणाली की सरकार

8) न्यायपालिका की स्वतन्त्रता

9) उच्चतम न्यायालय की अनु० 32, 136, 141 और 142के अधीन शक्ति

10) कतिपय मामलों में मूल अधिकार

11) संसद की संविधान संशोधन की सीमित शक्ति

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गंगापुर
वाराणसी

राज्य का संविदात्मक एवं अपकृत्यात्मक दायित्व

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 299 एवं 300 के अन्तर्गत राज्य के संविदात्मक एवं अपकृत्यात्मक दायित्व के बारे में बताया गया है।

• संविदा के अन्तर्गत राज्य का संविदात्मक दायित्व उसी प्रकार है जैसा कि सामान्य संविदा विधि के अन्तर्गत किसी प्राइवेट व्यक्ति का। अनु० 299 भारत सरकार और राज्य सरकारों को अपनी कार्यपालिका-शक्ति के प्रयोग में किसी भी प्रयोजन हेतु कोई भी संविदा करने के लिए प्राधिकृत करता है।

अनु० 299 के अधीन कोई भी संविदा भारत सरकार अथवा राज्य सरकार पर तभी आबद्धकर होगी जब –

1) वह स्पष्ट रूप से राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा की गई हो,
2) वह राष्ट्रपति या राज्यपाल की ओर से की गई हो,
3) वह ऐसे व्यक्तियों द्वारा तथा ऐसी रीति से की गयी हो जो कि राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा निर्देशित और प्राधिकृत किया गया हो।

• भीकराज जयपुरिया बनाम भारत संघ
• भारत संघ बनाम ए.एल. रालिया राम
• करमशी बनाम बम्बई राज्य
• पंजाब राज्य बनाम ओम प्रकाश। बलदेव कृष्णन
• भारत संघ बनाम ऐंग्लो (इण्डियन) अफगान एजेन्सीज

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोतीकोट, गंगापुर
वाराणसी

अपकृत्य के मामले में दायित्व (अनु० 300)

अनु० 300 यह उपबन्धित करता है कि जब तक संसद विधि द्वारा कोई अन्य उपबन्ध न करे, इस मामले में विधिक स्थिति वैसी ही होगी जैसी संविधान के प्रवर्तित होने के पूर्व थी।

- पी० एण्ड ओ० स्टीम नेवीगेशन कम्पनी बनाम दि सेक्रेटरी आफ स्टेट फार इण्डिया
- राजस्थान सरकार बनाम विद्यावती 1962
- ~~कस्तूरी~~
- कस्तूरी लाल बनाम उत्तर प्रदेश सरकार 1965

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गंगापुर
वाराणसी

सम्पत्ति का अधिकार – (अनुच्छेद 300-क)

मूल संविधान में सम्पत्ति का अधिकार एक मूल अधिकार था। परन्तु 44वें संविधान संशोधन द्वारा सम्पत्ति के मूल अधिकार को समाप्त कर दिया गया और उसे सांविधानिक अधिकार बना दिया ~~गया~~ गया।

अनु० 300 क यह उपबन्धित करता है कि – "कोई व्यक्ति विधि के प्राधिकार के बिना अपनी सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जायेगा"।

300क के अधीन किसी व्यक्ति की सम्पत्ति को राज्य द्वारा अर्जित किये जाने के लिए केवल एक शर्त है और वह है विधि का प्राधिकार।

सम्पत्ति का अधिकार मानव अधिकार है। अनु० 300-A एक संवैधानिक अधिकार है। 44वें संशोधन के फलस्वरूप अब भाग 3 में दिये गये मूल अधिकारों और अनु० 300क के अधीन सम्पत्ति के सांविधानिक अधिकारों में अन्तर केवल इतना है कि मूल अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए नागरिक अनु० 32 और अनु० 226 के अधीन न्यायालय में जा सकते हैं जबकि किसी व्यक्ति को अनु० 300क के अधीन सम्पत्ति के सांविधानिक अधिकार के राज्य द्वारा उल्लंघन किये जाने की दशा में उपचार अनु० 226 के अधीन उच्च न्यायालय में ही मिलेगा वह अनु० 32 के अधीन न्यायालय से उपचार नहीं मांग सकता।

सम्पत्ति की परिभाषा –

सम्पत्ति शब्द में वे सभी मान्य हित शामिल हैं जिनमें स्वामित्व से सम्बन्धित अधिकारों के गुण पाये जाते हैं अर्थात 'सम्पत्ति' शब्द के अन्तर्गत वे सभी प्रकार के हित शामिल हैं जिनका अन्तरण किया जा सकता है; जैसे –

पट्टेदारी या बन्धकी। इस प्रकार इसके अन्तर्गत मूर्त और अमूर्त दोनों प्रकार के अधिकार शामिल हैं; जैसे – रुपया, संविदा, सम्पत्ति के हिस्से, लाइसेन्स, बन्धक, वाद दायर करने का अधिकार, डिक्री, ग्रहण, हिन्दू मन्दिर में महन्त का पद, कम्पनी में अंशधारियों के हित, पेन्शन पाने का अधिकार।

अनु० 300 क में "सम्पत्ति" की अभिव्यक्ति भूमि तक ही सीमित नहीं है। यह अमूर्त जैसे कापीराइट तथा अन्य बौद्धिक संपदा को भी अन्तर्वलित करती है।

- केरल राज्य बनाम पदमनाभन नायर 1985
- एम० एम० पाइक बनाम भारत संघ 1976
- झारखण्ड राज्य बनाम जीतेन्द्र कुमार श्रीवास्तव 2013

- अनु० 300क का संरक्षण नागरिक और अनागरिक दोनों को प्राप्त है।

बाबू बन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गंगापुर
वाराणसी

लोकबन्धु राजनारायण
विधि महाविद्यालय
मोती कोट, गंगापुर
वाराणसी

व्यापार एवं वाणिज्य की स्वतन्त्रता –

भारतीय संविधान का अनु० 301 सम्पूर्ण भारत क्षेत्र में निर्बन्धित व्यापार, वाणिज्य तथा समागम की स्वतन्त्रता प्रदान करता है। अनु० 301 का प्रमुख उद्देश्य स्पष्टतया राज्यों के बीच सीमा - अवरोधो को हटाना तथा उनका एक इकाई के रूप में सृजन करना है जिससे समस्त भारत में व्यापार और वाणिज्य का विकास अबाध रूप से हो सके।

भारतीय संविधान का अनु० 301 घोषित करता है कि भारत राज्यक्षेत्र में सर्वत्र व्यापार, वाणिज्य एवं समागम अबाध होगा।

• अतियाबारी चाय कम्पनी बनाम असम राज्य 1961

• भारतीय संविधान का अनु० 301 उन निर्बन्धनों का उल्लेख करता है जो अनु० 301 में प्राप्त ई स्वतन्त्रता पर लगाये जा सकते है। ये निर्बधन 302 से 305 तक में उल्लिखित है।
अनु० 301 में प्रदत्त स्वतन्त्रता पर निम्न निर्बन्धन लगाये जा सकते है —

i) लोकहित में व्यापार एवं वाणिज्य को विनियमित बनाने की संसद की शक्ति

ii) व्यापार एवं वाणिज्य को विनियमित करने की राज्यों की शक्ति

• मद्रास राज्य बनाम भाईलाल भाई 1964